परमात्मा होने का यथार्थ उपाय

यह आत्मा स्वभाव से त्रिकाल पूर्ण शुद्ध स्वरूप ही है। अन्तर में विद्यमान अनंत शक्तियों को प्रकट करने के लिये पाँच इन्द्रियों की ओर झुकनेवाले अपने उपयोग को वहाँ से हटाना एवं आत्मा में जोड़ना ही इन्द्रिय संयम है; यही धर्म है, आत्मा अतीन्द्रिय आनंद का रसकन्द है, उस ओर दृष्टि करना, उसमें ही जमना सम्यग्दर्शन है, मोक्षमार्ग है। बाह्य वस्तुयें तो छूटी ही है, उन्हें कहाँ छोड़ना है ? मात्र उनसे लक्ष को हटाकर आत्मसन्मुख करना है।

जिन्हें सुख की इच्छा है, उन्हें अतीन्द्रिय आत्मा की रुचि होनी चाहिये। जो दया-दान को हितकर मानता है, इन्द्रियों से सुख मानता है; उसे अतीन्द्रिय आनंद की खबर नहीं है। जो ऐसा मानता है कि मैं पाँच इन्द्रियों में प्रवृत्ति करता हूँ या कर सकता हूँ तथा मेरा सुख इन इन्द्रियों के आधीन है तथा जो ऐसा मानता है कि मैं पर में कुछ कर सकता हूँ या मुझे पर से सुख-दुख होता है, उसकी पर में एकत्वबुद्धि है। उसने दो द्रव्यों को भिन्न-भिन्न नहीं माना। अत: आत्मा ज्ञानानन्दस्वभावी है ह्न ऐसी श्रद्धा करना योग्य है।

अतीन्द्रिय आत्मस्वभाव की रुचि होने पर पाँच इन्द्रियों की प्रवृत्ति नहीं रहती। आत्मा में जो परमपवित्र ज्ञानस्वभाव भरा पड़ा है, उसे प्रकट करने के लिये पाँचों इन्द्रियों की ओर से रुचि छोड़ना चाहिये, विषयों की ओर के झुकाव में आत्मा का हित नहीं है, पुत्र-पुत्रियों में एवं उनके अनुराग में सुख नहीं है।

यहाँ कहते हैं कि जिसको आत्मा का अतीन्द्रिय ज्ञानानन्दस्वभाव श्रद्धा में आ जाता है, उसको परपदार्थ के कर्तृत्त्व-भोक्तृत्व की रुचि एवं उनके प्रति अहंकार-ममकार नहीं रहता। मैं पर का भला-बुरा कर सकता हूँ, यह बुद्धि छूट जाती है। वह आत्मा के स्वभाव में एकाग्रता करके आनंद प्रकट करता है, यही परमात्मा होने का यथार्थ उपाय है।- **समाधितंत्र प्रवचन, पृष्ठ : 172-173**

साधना चैनल पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रवचन

प्रतिदिन प्रातः 6:45 बजे अवश्य सुनें।

साधना चैनल आपके यहाँ न आता हो तो श्री पंकज जैन (साधना चैनल) से 09312506419 नम्बर पर सम्पर्क करें।

वीतराग-विज्ञान

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का, घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : 22 260 अंक : 8

प्रवचनसार पद्यानुवाद

ज्ञेयतत्त्वप्रज्ञापन महाधिकार

द्रव्यसामान्य प्रज्ञापन अधिकार

परिणमित जिय नर देव हो या अन्य हो पर कभी भी ।
द्रव्यत्व को छोड़े नहीं तो अन्य होवे किसतरह ।।112।।
मनुज देव नहीं है अथवा देव मनुजादिक नहीं ।
ऐसी अवस्था में कहो कि अनन्य होवे किसतरह ।।113।।
द्रव्य से है अनन्य जिय पर्याय से अन-अन्य है।
पर्याय तन्मय द्रव्य से तत्समय अत: अनन्य है ।।114।।
अपेक्षा से द्रव्य 'है' 'है नहीं' 'अनिर्वचनीय है' ।
'है है नहीं' इसतरह ही अवशेष तीनों भंग हैं।।115।।
पर्याय शाश्वत नहीं परन्तु है विभावस्वभाव तो ।
है अफल परमधरम परन्तु क्रिया अफल नहीं कही ।।116।।
नाम नामक कर्म जिय का पराभव कर जीव को ।
नर नारकी तिर्यंच सुर पर्याय में दाखिल करे ।।117।।
नाम नामक कर्म से पशु नरक सुर नर गति में ।
स्वकर्म परिणत जीव को निजभाव उपलब्धि नहीं ।।118।।
उत्पाद-व्यय ना प्रतिक्षण उत्पादव्ययमय लोक में ।
अन-अन्य हैं उत्पाद-व्यय अर अभेद से हैं एक भी ।।119।।

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

मैं एक शुद्ध, ममतारहित हूँ

पूज्यपाद आचार्य श्री देवनन्दि के प्रसिद्ध ग्रन्थ इष्टोपदेश के 27 वें श्लोक पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरसगर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। मूल श्लोक इसप्रकार है ह्न

एकोऽहं निर्मम: शुद्धो ज्ञानी योगीन्द्रगोचर: ।
बाह्या: संयोगजा भावा मत्त: सर्वेऽपि सर्वथा ।।27।।

ज्ञानी और योगीन्द्रों द्वारा जानने योग्य मैं एक, ममतारहित, शुद्ध हूँ। अन्य संयोगजन्य समस्त देहादि व रागादि भाव मुझसे सर्वथा भिन्न हैं।

यहाँ आचार्यदेव कहते है कि अपना आत्मा चैतन्यनिधान से परिपूर्ण शुद्ध है; उसे छोड़कर विकल्प के साथ संबंध जोड़नेवाला व्यभिचारी है, ऐसा कृत्य इस जीव को शोभा नहीं देता ।

अत: आचार्य पूज्यपादस्वामी विकल्प के साथ संबंध तोड़ने हेतु निर्मम होने का उपदेश देते हुये शिष्य को कहते हैं कि –

मैं एक हूँ, रागादि परद्रव्यों के साथ मेरा सम्बन्ध नहीं है तथा विकल्पादि का भी मेरे स्वरूप में प्रवेश नहीं है। मैं तो अनंत ज्ञान-आनंदस्वरूप, परद्रव्यों से पूर्णत: निर्मम, एकरूप हूँ।

अस्ति से विचार करें तो मैं एक, शुद्ध, ज्ञानघन हूँ और नास्ति से विचार करें तो मैं परसंबंध और परद्रव्यों के ममत्व से रहित निर्मम हूँ। मैं तो शुद्ध हूँ, यह शुद्ध ज्ञानस्वभाव ही मेरा अखण्ड़ भण्डार है। इस बात को योगी ही जानते हैं।

प्रश्न : मेरा आत्मस्वभाव योगीन्द्रों द्वारा जाननेयोग्य है; किन्तु योगी कौन हैं?

उत्तर : जो स्वरूप में एकता और राग से भिन्नता रखे, वे योगी हैं। ऐसे योगीन्द्र अर्थात् केवली भगवान द्वारा ही आत्मा जानने में आता है। संयोगजनित देह-मन-वाणी, दया-दान, पुण्य-पापादि वृत्तियाँ मेरे मूल स्वरूप में नहीं हैं। मनुष्य देह पाकर समझने योग्य एकमात्र यही बात है। कहा भी है ह्न

सब साधन बंधन थया, रह्यो न कोई उपाय।
सत् साधन समझ्यो नहीं तो बंधन शूं जाये ?

सत् साधन समझे बिना अन्य सारे प्रयत्न विफल ही हैं, मैं तो एक शुद्ध ज्ञानघन हूँ, इसके अलावा समस्त विकल्पादि मुझसे सर्वथा भिन्न हैं।

जिसप्रकार परमाणु मुझसे भिन्न हैं; उसीप्रकार पंच महाव्रतादि पालन के भाव अथवा अन्य सभी विकल्प मेरे स्वरूप से भिन्न हैं। इसप्रकार निश्चित करके स्वरूप में ही एकत्व करना निर्मम होने का उपाय है। सत् को प्राप्त करने का एकमात्र साधन यही है; अन्य नहीं।

प्रश्न : यह आत्मा परपदार्थों से निर्मम किस रीति से होगा ? निर्मम होने का उपाय क्या है ?

उत्तर : आचार्य कहते हैं कि मैं द्रव्यार्थिकनय से सामान्य द्रव्यस्वरूप त्रिकाल रहनेवाला एक हूँ। मैं ज्ञानी और योगियों के स्वसंवेदन गम्य हूँ। समस्त संयोगीभाव मुझसे बिलकुल भिन्न हैं। यह प्रमाण के विषयभूत पर्याय युक्त द्रव्य की बात नहीं है; अपितु द्रव्यार्थिकनय के विषयभूत द्रव्य की अर्थात् सामान्य ध्रुवस्वभाव की बात है। सामान्य और विशेषरूप द्रव्य प्रमाण का विषय है; किन्तु यहाँ जिस सामान्य, एकरूप, त्रिकाली ध्रुव शुद्धस्वभाव को दर्शाया गया है, वह द्रव्यार्थिकनय का विषय है।

वस्तु दृष्टि से अर्थात् ध्रुव की लक्ष्यवाली दृष्टि से मैं एक हूँ। भूत-भविष्य और वर्तमान की प्रत्येक पर्याय में सहज एकरूप रहनेवाला मैं आत्मा हूँ। इसे समझने के लिये पहले थोड़ा-सा अभ्यास होना चाहिये; क्योंकि यह मूलतत्त्व की बात है। बिना अभ्यास के समझ में नहीं आयेगी।

प्रश्न : निर्ममत्व होने के लिये चिंतन का क्या उपाय है अर्थात् किसप्रकार चिंतन करना चाहिये ?

उत्तर : परद्रव्यों से जुदा होकर उनमें ममत्वपना नहीं करने से निर्ममता होती है तथा इसी से सुख-शान्ति और समाधान प्राप्त होता है; इसलिये परद्रव्यों से निर्ममत्व होकर एकमात्र आत्मा का ही चिंतन करना चाहिये।

जिसप्रकार मोती के हार में प्रत्येक मोती ड़ोरे में पिरोया हुआ है। मोती तो अलग-अलग हैं, किन्तु डोरा एक ही है; उसीप्रकार जो भूतकाल की पर्यायें हो गईं, वर्तमान में हो रही हैं और भविष्य में होंगी; उन समस्त पर्यायों में सकल एकरूप रहनेवाला आत्मा भी सदृश स्वभावी है।

द्रव्यार्थिकनय की दृष्टि से मैं एक हूँ। शरीर, कर्म, पुण्य-पापादि भाव मेरे नहीं हैं और मैं उनका नहीं हूँ, मैं तो ऐसे मिथ्या अभिप्राय से भी सर्वथा भिन्न हूँ। मैं उनके स्वरूप में नहीं हूँ और वे मेरे स्वरूप में नहीं हैं तथा उनका कार्य मेरे स्वरूप में नहीं है और मेरा स्वरूप उनके कार्य में नहीं है।

अहाहा ! भाई जिस जीव को स्व से एकत्व है और पर से भिन्नत्व है; वह इसप्रकार स्वीकार करता है कि ये शरीरादि परद्रव्य मेरे नहीं हैं और मैं उनका नहीं हूँ, वे मेरे स्वरूप नहीं हैं और मैं उन स्वरूप नहीं हूँ ह्न बस यही चिंतन निर्मम होने का उपाय है। पर से भिन्न आत्मा का जैसा स्वरूप है, वैसा न मानकर उससे विरुद्ध शरीरादि परद्रव्यों को अपना मानना और अपने को उनका स्वामी मानना ही मिथ्याशल्य है।

भाई ! जो तेरा है, वह तुझसे भिन्न नहीं है और जो तुझसे भिन्न है, वह तेरा नहीं है; इसलिये तुझे अन्य परपदार्थों में आनंद नहीं आ सकता। जो तेरा स्वरूप नहीं है, उसमें से तुझे आनन्द नहीं आता। तेरे स्वरूप में से ही तुझे आनन्द आयेगा ह्न सर्वप्रथम ऐसा नक्की कर !

शरीर, स्त्री-पुत्र, परिवार, रागादि संयोगों को अच्छा मानने का अर्थ ही यह है कि वे मेरे हैं और मैं उनका हूँ ह्न ऐसी प्रबल मान्यता अन्तर में बैठी है। परद्रव्य मेरे और मैं उनका - यह अभिप्राय ममता युक्त है, जो ऐसे अभिप्राय से रहित हैं, वे ही निर्मम है।

'मैं उनका और वे मेरे' इसीप्रकार 'मैं परद्रव्यों की सुविधा हेतु मदद करता हूँ और वे मेरी सुविधा में मदद करते हैं अर्थात् परद्रव्य मेरे सुख-दु:ख में निमित्त हैं और मैं उनके सुख-दु:ख में निमित्त हूँ' ह्न ऐसा मूढ़ अभिप्राय ज्ञानी जीव को नहीं होता। ज्ञानी जीव इस अभिप्राय से रहित अपने आप को पूर्णत: निर्ममस्वभावी ही मानता है। **(क्रमश:)**

परमात्मा कौन है ?

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार की सातवीं गाथा पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्म-रसगर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है।

गाथा मूलत: इसप्रकार है –

णिस्सेसदोसरहिओ केवलणाणाइपरमविभवजुदो।
सो परमप्पा उच्चइ तव्विवरीओ ण परमप्पा ।।7।।

नि:शेष दोष से जो रहित है और केवलज्ञानादि परम वैभव से जो संयुक्त है, वह परमात्मा कहलाता है; उससे विपरीत परमात्मा नहीं है।

(गतांक से आगे ...)

इसी भाव को आचार्यश्री कुन्दकुन्ददेव प्रवचनसार की गाथा में कहते हैं ह्न

तेजो दिट्ठी णाणं इड्ढी सोक्खं तहेव ईसरियं।
तिहुवणपहाणदइयं माहप्पं जस्स सो अरिहो।।

तेज अर्थात् भामण्डल, केवलदर्शन, केवलज्ञान, ऋद्धि अर्थात् समवसरणादि विभूति, अनंत सुख, ऐश्वर्य माने इन्द्रादि भी जिसका दासत्व स्वीकार करें और त्रिलोक के अधिपतियों के वल्लभरूप त्रिभुवनप्रधानवल्लभपना जिनका माहात्म्य है, वे अरहंत हैं।

इस गाथा में अरहंतदेव की पहिचान कराई है। आचार्य स्वयं भले ही अभी परमात्मा न हुये हों; फिर भी परमात्मा कैसे होते हैं, उसे पहिचानते हैं। जैसे निर्धन मनुष्य भी राजा की परीक्षा करके उसे पहिचान सकता है; उसीप्रकार परमात्मा होने से पहले अल्पज्ञ प्राणी भी सर्वज्ञ परमात्मा की परीक्षा करके उनकी पहिचान कर सकता है। अत: हमें भी परीक्षा करके पहिचानना चाहिये कि सर्वज्ञता को प्राप्त परमात्मा कैसे होते हैं तथा उनसे विरुद्ध कौन हैं ? भगवान ने छह द्रव्यों को जानकर उनका कथन किया है तथा उनमें अपना जो परम चैतन्य स्वभाव ध्रुव कारणपरमात्मा है, उसकी भावना को ही परमात्मदशा का कारण कहा है।

परमात्मदशा प्रकट होते ही शरीर एकदम सुन्दर रूपवान स्फटिक जैसा हो जाता है; उसके भामण्डल अर्थात् तेज होता है ह्न यह सब तो पुण्य का फल है।

पुनश्च उन अरहंत परमात्मा के केवलदर्शन और केवलज्ञान होता है, समवसरणादि ऋद्धि होती है। यद्यपि भगवान तो स्वयं वीतराग हैं; परन्तु इन्द्र और देवगण आकर रत्नजड़ित स्वर्ण मानस्तंभ युक्त समवसरण की अद्भुत रचना करते हैं। उस धर्मसभा में देव, मनुष्य, सर्प, सिंह, बाघ इत्यादि लाखों करोड़ों जीव धर्मश्रवण करने आते हैं ह्न ऐसे समवसरण में भगवान विराजते हैं।

भगवान किसी के घर में नहीं उतरते। जिसको परमात्मदशा (तीर्थंकरदशा) होती है, उसे बाहर में भी ऐसा योग होता है। इन सबके अतिरिक्त भगवान को आत्मस्वभाव की भावना से उत्पन्न परम अतीन्द्रिय सुख होता है।

इन्द्रादि भी भगवान का दासत्व स्वीकारते हैं। उनकी प्रभुता के सामने इन्द्र भी नतमस्तक होकर कहता है कि हे नाथ ! हम तो तुम्हारे किंकर हैं, दास हैं ह्न ऐसा भगवान का ऐश्वर्य है। वे तीन लोक के अधिपतियों के वल्लभ हैं ह्न ऐसी महिमावाले अरहंत परमात्मा को पहिचानकर उनके द्वारा प्रतिपादित आत्मा का भान करने से पाप का नाश हो जाता है; किन्तु भगवान स्वयं किसी के पाप का नाश नहीं करते।

सुरनाथ-इन्द्र तथा नरनाथ-चक्रवर्ती भी सर्वज्ञ भगवान के समक्ष तुच्छ हैं। उर्ध्वलोक का स्वामी इन्द्र भी भगवान की भक्तिपूर्वक वंदना करके कहता है कि हे नाथ ! हम तो आपकी प्रभुता के सामने पामर हैं।

कोई सर्वज्ञ भगवान को तो माने नहीं और यद्वा-तद्वा किसी को भी ईश्वर मानकर उन्हें माथा झुकावे तो कल्याण होनेवाला नहीं है। सम्यग्दृष्टि जीव सर्वज्ञ परमात्मा के अतिरिक्त किसी अन्य के पदस्पर्श नहीं करता, जिन्हें ऐसी सर्वज्ञदशा प्रकट नहीं है और जो सदोष हैं, वे सब देवाभास हैं, उन कुदेवों को माननेवाले तो व्यवहार से भी जैन नहीं हैं।

इसीतरह की बात श्री आचार्य अमृतचन्द्रदेव आत्मख्याति के 24वें कलश में कहते हैं ह्न

(शादूर्लविक्रीडित)

कांत्यैव स्नपयन्ति ये दशदिशो धाम्ना निरुन्धन्ति ये।
धामोद्दाममहस्विनां जनमनो मुष्णन्ति रूपेण य॥
दिव्येन ध्वनिना सुखं श्रवणयोः साक्षात्क्षरंतोऽमृतं।
वंद्यास्तेऽष्टसहस्रलक्षणधरास्तीर्थेश्वराः सूरयः ॥

जो कांति से दशों दिशाओं को निर्मल करते हैं, तेज द्वारा अत्यन्त तेजस्वी सूर्यादिक के तेज को ढक देते हैं। जो रूप से लोगों के चित्त को हर लेते हैं, दिव्यध्वनि से भव्यों के कानों में साक्षात् अमृत बरसाते हैं अर्थात् सुख उत्पन्न करते हैं और जो एकहजार आठ लक्षणों को धारण करते हैं, वे तीर्थंकर सूरी वंद्य हैं।

भगवान अरहंत परमात्मा का शरीर ऐसा तेजस्वी होता है कि दसों दिशायें उज्वल हो जाती हैं। मध्यरात्रि में भी शरीर में से हजारों सूर्य-चन्द्र जैसा प्रकाश निकलता है अर्थात् वहाँ अन्धेरा नहीं होता। अन्तर में केवलज्ञान का दिव्य प्रकाश प्रकट होने पर बाहर में शरीर भी अत्यन्त तेजस्वी हो जाता है। उसमें देखनेवाले को अपने वर्तमान भव के साथ अगले-पिछले तीन-तीन भव और दिखाई पड़ते हैं अर्थात् कुल सात भव दिखाई पडते हैं। जब भगवान के शरीर का तेज ही सूर्य-चन्द्र से अधिक है तो उनके चैतन्यसूर्य की तो बात ही क्या करें !

उनके देह का रूप भी लोगों के मन को मोहित कर लेता है। मूल्यवान हीरे की धूल भी मूल्यवान होती है। उनका शरीर तो जन्म से ही ऐसा रूपवान होता है कि इन्द्र भी उसे अवलोकन करते-करते तृप्त नहीं होते; फिर केवलज्ञान होने पर तो वह शरीर परमऔदारिक स्फटिक जैसा हो जाता है।

भगवान की ऐसी दिव्यध्वनि छूटती है कि श्रोताओं के कर्णविवर में मानों अमृत उढेला जा रहा हो। वहाँ श्रोताओं को अमृतपान जैसा सुख प्राप्त होता है। भगवान के समवसरण में भव्य जीव ही होते हैं, अभव्य जीव आत्मा से तो दूर होते ही है तथा भगवान की वाणी से भी दूर रहते हैं। अभव्य के भगवान की वाणी सुनने का योग नहीं होता। भगवान की वाणी श्रवण करते हुये बिलाव तथा मूषक, सिंह तथा हिरण अपने बैरभाव तथा भय का विस्मरण करके एकसाथ बैठकर सुनते हैं।

वहाँ सभी जीवों की ऐसी ही योग्यता होती है। पुनः भगवान के देह में 1008 सुन्दर लक्षण होते हैं ह्न ऐसे तीर्थंकर सूरि वंद्य हैं।

अब सातवीं गाथा की टीका पूर्ण करते हुये मुनिराजश्री पद्मप्रभमलधारि देव श्लोक द्वारा श्री नेमिनाथ तीर्थंकर की स्तुति करते हैं ह्न

(मालिनी)

जगदिदमजगच्च ज्ञाननीरेरुहान्त
र्भ्रमरवदवभाति प्रस्फुटं यस्य नित्यम्।
तमपि किल यजेहं नेमितीर्थंकरेशं
जलनिधिमपि दोर्भ्यामुत्तराम्यूर्ध्ववीचिम्॥

जिसप्रकार कमल के भीतर भ्रमर समा जाता है; उसीप्रकार जिनके ज्ञानकमल में यह जगत तथा अजगत (लोकालोक) सदा स्पष्टरूप से समा जाते हैं, ज्ञात होते हैं; उन नेमिनाथ तीर्थंकर भगवान को मैं सचमुच पूजता हूँ कि जिससे ऊँची तरंगोंवाले समुद्र (दुस्तर संसार) को भी दो भुजाओं से पार कर लूँ।

टीकाकार मुनि स्वयं महाब्रह्मचारी हैं और बालब्रह्मचारी नेमिनाथ भगवान की स्तुति करते हैं। भगवान को अन्तरस्वभाव की शक्ति में से ही ज्ञान विकसित हुआ है, जिससे उन्हें लोकालोक ज्ञात हो जाते हैं। जैसे भ्रमर कमल में समा जाता है अर्थात् कमल बड़ा और भ्रमर छोटा होता है; वैसे ही ज्ञानकमल में लोकालोक प्रत्यक्षपने समा जाता है अर्थात् ज्ञान सामर्थ्य महान और लोकालोक तुच्छ है ह्न ऐसा भगवान का केवलज्ञान है। वह केवलज्ञान आत्मा की शक्ति में से ही आया है। अपनी आत्मा में भी ऐसी ही शक्ति है, उसका विश्वास करके एकाग्र होने पर परमात्मदशा प्रकट होगी।

अहो ! अपने ज्ञानकमल में लोकालोक को प्रत्यक्ष जाननेवाले श्री नेमिनाथ भगवान को मैं नमन करता हूँ कि जिससे ऊँची तरंगोंवाले इस समुद्र को अपनी दोनों भुजाओं से पार कर सकूँ। चाहे जितने विकल्पों की तरंगें उठें, उन्हें मैं अपने स्वभाव की श्रद्धा और एकाग्रता के बल से पार कर जाऊँ और पूर्ण परमात्मदशा को प्रकट करूँ।

इसप्रकार अरहंत भगवान को पहिचानकर उन्हें नमस्कार किया। ●

शक्तियों का संग्रहालय : भगवान आत्मा

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम समयसार नामक ग्रन्थाधिराज पर परमपूज्य आचार्य अमृतचन्द्रदेव ने 'आत्मख्याति' नामक संस्कृत टीका लिखी है। उसके अन्त में परिशिष्ट के रूप में अनेकान्त का विस्तृत वर्णन करते हुये आत्मा की 47 शक्तियों का वर्णन किया है, साथ ही अनेक कलश भी लिखे हैं। उन पर गुरुदेवश्री कानजीस्वामी ने समय-समय पर अतिमहत्त्वपूर्ण प्रवचन किये हैं, जो पाठकों के लाभार्थ क्रमशः प्रस्तुत हैं।

(गतांक से आगे .....)

भाई ! यह तेरा वैभव है, जो पूर्वापर विरोधी सा दिखता हुआ भी अविरोधी है।

1. पर्यायदृष्टि से देखने पर आत्मा अनेकरूप दिखाई देता है और द्रव्यदृष्टि से देखने पर एकरूप।

2. क्रमभावी पर्यायदृष्टि से देखने पर क्षणभंगुर दिखाई देता है और सहभावी गुणदृष्टि से देखने पर ध्रुव।

3. ज्ञान की अपेक्षा सर्वगत दृष्टि से देखने पर परमविस्तार को प्राप्त दिखाई देता है और प्रदेशों की अपेक्षावाली दृष्टि से देखने पर अपने प्रदेशों में ही व्याप्त दिखाई देता है ह्न ऐसा आत्मा का वैभव है।

इस 273 वें कलश के भावार्थ में द्रव्य-पर्याय का भेद स्पष्ट करते हुये कहा है कि पर्यायदृष्टि से देखने पर आत्मा अनेकरूप दिखाई देता है, क्योंकि पर्यायें अनेक हैं; जबकि द्रव्यदृष्टि से देखने पर वह त्रिकाल एकरूप दिखाई देता है; क्योंकि इस दृष्टि से द्रव्य अभेद है, अखण्ड है और एकरूप ही है।

इसप्रकार आत्मवस्तु अनेकरूप भी है और एकरूप भी है।

अब पर्यायदृष्टि को दूसरी रीति से बताते हैं ह्न क्रमभावी पर्यायदृष्टि से देखने पर आत्मा क्षणभंगुर दिखाई देता है। पर्यायदृष्टि से दिखाई देता है अर्थात् क्षण-क्षण में नाश होना आत्मा का स्वभाव है ह्न ऐसा कहा है।

प्रश्न : पर्याय के पहले बोल में - **पर्यायदृष्टि से देखने पर** ह्न ऐसा कहा था

और तत्काल बाद दूसरे बोल में **क्रमभावी पर्यायदृष्टि से देखने पर** ह्न ऐसा कहा सो इन दोनों कथनों में क्या अन्तर है ?

भाई ! दूसरे बोल में पर्यायदृष्टि को ही दूसरी दृष्टि से देखने की बात कही है। पहले बोल में अनेकता की बात कही है और दूसरे बोल में क्षणभंगुरता की बात कही है। क्षणभंगुरता द्वारा शरीर, स्त्री-पुत्रादि रूप संयोगों को संध्या की लालिमावत् क्षणभर में विनष्ट होनेवाले बताया है।

अब कहते हैं कि 'सहभावी गुणों की दृष्टि से देखने पर आत्मा ध्रुव दिखता है' ह्न देखो पहले बोल में पर्यायदृष्टि और द्रव्यदृष्टि की बात कही थी और यहाँ दूसरे बोल में पर्यायदृष्टि और गुणदृष्टि की बात कह रहे हैं, इसकारण इन दोनों बोलों में अन्तर है।

पहले बोल में पर्यायदृष्टि से अनेकपना और द्रव्यदृष्टि से एकपना दिखाया है। जबकि यहाँ दूसरे बोल में पर्यायदृष्टि अवश्य ली; किन्तु क्रम-क्रम से होती हुई पर्यायदृष्टि ली है। क्रम-क्रम से होती हुई पर्यायदृष्टि से देखो तो वह क्षणभंगुर है और सहभावी गुणदृष्टि से देखो तो वह ध्रुव है।

पहले बोल में पर्यायदृष्टि के सामने द्रव्यदृष्टि की बात थी और इस दूसरे बोल में पर्यायदृष्टि के सामने गुणदृष्टि की बात की है; क्योंकि दूसरे बोल में अक्रमभावी के साथ-साथ अनेकपना भी बताना है और सहभावी गुण अनेक हैं। द्रव्य एक है तो गुण अनेक हैं और वे गुण सहभावी-एकसाथ रहते हैं, इसकारण इस बोल में गुणदृष्टि है।

अहा ! सब पर्यायें एकसाथ नहीं होती, एकसमय में एक ही पर्याय होती है; तथापि गुण सदैव एकसाथ ही होते हैं; इसकारण गुणदृष्टि से देखने पर आत्मा ध्रुव है।

यहाँ कहते हैं कि इस मनुष्यपने की पर्याय का नाश होने पर दूसरे समय में दूसरी गति की पर्याय उत्पन्न होती है ह्न ऐसा उस पर्याय का क्षणभंगुर स्वभाव है तथा सहभावी गुणदृष्टि से देखें तो वह ध्रुव दिखाई देता है। सहभावी का अर्थ है सबगुणों का एकसाथ होना तथा एकगुण की अपेक्षा सब पर्यायें कभी एकसाथ नहीं होती। हाँ ! अनंत गुणों की अनंत वर्तमान पर्यायें एकसाथ होती हैं।

ज्ञान की अपेक्षावाली सर्वगत दृष्टि से देखने पर ज्ञान परमविस्तार को प्राप्त दिखता है। लोकालोक ज्ञान की पर्याय में आ गया हो ह्न ऐसा दिखता है अर्थात् वह सर्वगत है, सबकुछ जानता है। अरे ! यद्यपि लोकालोक का अन्त नहीं है; तथापि उनके ज्ञान में सबकुछ ज्ञात हो जाता है।

आत्मा और उसकी ज्ञानपर्याय अपने असंख्यप्रदेशों में ही है, वह किसी अन्य के प्रदेशों में अथवा दूसरों की पर्यायों में नहीं चली जाती।

अब सारांश में द्रव्यपर्यायात्मक अनंतधर्मवाला वस्तु का स्वभाव बताते हैं ह्न

1. जो वस्तु पर्याय अपेक्षा अनेक है, वही वस्तु द्रव्यअपेक्षा एक है।

2. जो वस्तु पर्याय अपेक्षा क्षणभंगुर है, वही वस्तु द्रव्यअपेक्षा नित्य है।

3. जो वस्तु ज्ञान अपेक्षा सर्वव्यापक है, वही वस्तु क्षेत्र अपेक्षा स्वक्षेत्र में रहती है।

वस्तु का ऐसा स्वभाव देखकर अज्ञानियों को आश्चर्य होता है कि जो वस्तु एक हो वही अनेक तथा एक ही वस्तु नित्यानित्य कैसे हो सकती है ? किन्तु ज्ञानियों को वस्तुस्वरूप में कुछ भी आश्चर्य नहीं लगता है; क्योंकि वस्तु का ऐसा ही स्वभाव है। **(क्रमश:)**

विवेक और अविवेक

जहाँ विवेक है, वहाँ आनन्द है, निर्माण है; और जहाँ अविवेक है वहाँ कलह है, विनाश है। समय तो एक ही होता है, पर जिससमय अविवेकी निरन्तर षड्यन्त्रों में संलग्न रह बहुमूल्य नरभव को यों ही बरबाद कर रहे होते हैं; उसी समय विवेकीजन अमूल्य मानव भव का एक-एक क्षण सत्य के अन्वेषण, रमण एवं प्रतिपादन द्वारा स्व-पर हित में संलग्न रह सार्थक व सफल करते रहते हैं। वे स्वंय तो आनन्दित रहते ही हैं, आसपास के वातावरण को भी आनन्दित कर देते हैं।

इसप्रकार क्षेत्र और काल एक होनेपर भी भावों की विभिन्नता आनन्द और क्लेश तथा निर्माण और विध्वंस का कारण बनती है। यह सब विवेक और अविवेक का ही खेल है। **ह्न सत्य की खोज, पृष्ठ : 199**

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : निश्चय श्रुतकेवली किसे कहते हैं ?

उत्तर : जो दर्शन-ज्ञान-चारित्र से आत्मा का अनुभव करता है, वह निश्चय श्रुत केवली है। जिसमें से केवलज्ञान प्रकट होनेवाला है ह्न ऐसे आत्मा को जिसने स्वानुभव से जाना, वह परमार्थ से श्रुतकेवली है। उसको अल्पकाल में केवलज्ञान अवश्य होनेवाला है; इसलिये उसे परमार्थ से श्रुतकेवली कहा है। तथा इस आत्मा को जाननेवाली जो श्रुतज्ञान की पर्याय है, जिसमें **ज्ञान सो आत्मा** ऐसा भेद पड़ता है; उस ज्ञान पर्याय को व्यवहार श्रुतकेवली कहा है। जो ज्ञान पर्याय सर्व को जानती है, वह स्वपर की ज्ञायक ज्ञानपर्याय सर्वश्रुत ज्ञान है ह्न उसको व्यवहार श्रुतकेवली कहते हैं।

प्रश्न : आस्रव व्यवहार से ज्ञेय कब हो ?

उत्तर : आस्रवभाव अशुचिरूप हैं और आत्मा पवित्र है। आस्रव का अंश भी स्वभाव को रोकता है; इसलिये वह आत्मा के स्वभाव से विपरीत है। आत्मस्वभाव तो स्व-पर का ज्ञाता है; अत: आत्मा चेतन स्वभावी है और आस्रव स्वयं कुछ नहीं जानते; इसलिये वे जड़ स्वभावी हैं। आस्रव तो अन्य के द्वारा ज्ञेय होनेयोग्य हैं।

यहाँ **आस्रव अन्य के द्वारा ज्ञेय होनेयोग्य हैं** ह्न ऐसा कहकर आस्रवों को आत्मा का व्यवहार से ज्ञेयत्व सिद्ध किया है। वे आस्रव वास्तव में व्यवहार से ज्ञेय कब हों ? जब आत्मा आस्रवों से भिन्न अपने स्वभाव को जानकर, आस्रवों से विमुख होकर, स्वभाव की ओर बढ़े; तब उसकी स्व-पर प्रकाशक शक्ति प्रकट हो और तब वह आस्रवों से अपने को भिन्न जानें अर्थात् वे आस्रव पर ज्ञेय हो जावें, व्यवहार से ज्ञेय हो जावें।

आस्रव मैं हूँ ऐसी पर्याय बुद्धि से स्व-पर प्रकाशक ज्ञान शक्ति विकसित नहीं होती अर्थात् आस्रव व्यवहार से ज्ञेय नहीं होते। आस्रवों से भिन्न हुये बिना आस्रवों को व्यवहार से ज्ञेय करेगा कौन ? जिसने परमार्थ ज्ञेयरूप से आत्मा को लक्ष में लिया है, वही आस्रवों को व्यवहार से ज्ञेयरूप जानता है।

प्रश्न : द्रव्यार्थिकनय और पर्यायार्थिक नय किसको जानते हैं ? इनका स्वरूप क्या है ?

उत्तर : त्रिकाली स्वभाव को देखनेवाली दृष्टि द्रव्यदृष्टि है और वर्तमान पर्याय को देखनेवाली दृष्टि पर्यायदृष्टि है। जो त्रिकाली द्रव्यस्वभाव को जाने, अपना कहे वह द्रव्यार्थिकनय है। उसमें त्रिकालीस्वभाव को जाननेवाला ज्ञान तो अंतरंग नय (अर्थनय अथवा भावनय) है और उसको कहनेवाला वचन बहिर्नय (वचनात्मक अर्थात् शब्दनय) कहा जाता है। जो ज्ञान वर्तमान पर्याय को जानता है, उस ज्ञान को या उसके कहने वाले वचन को पर्यायार्थिकनय कहते हैं। उसमें पर्याय को जानने वाला ज्ञान अंतरंग नय है और उसको कहनेवाला वचन बहिर्नय है।

सिद्धदशा को जानने वाला ज्ञान पर्यायार्थिकनय है; परन्तु सिद्धदशा प्रगट करने का उपाय पर्यायदृष्टि नहीं है। द्रव्यदृष्टि ही सिद्धदशा प्रगट करने का उपाय है; फिर भी जो सिद्धदशा प्रगट होती है, उसे जाननेवाला तो पर्यायार्थिकनय ही है।

प्रश्न : द्रव्यार्थिकनय द्रव्य को मुख्य करके जानता है; यहाँ द्रव्य का क्या अर्थ है?

उत्तर: द्रव्य और पर्याय को मिलाकर द्रव्य नहीं कहें अर्थात् गुण-पर्याय का पिण्ड वह द्रव्य - यह अपेक्षा यहाँ नहीं है। यहाँ तो वर्तमान अंश को गौण करके त्रिकाल द्रव्य शक्ति, वह द्रव्य है; स्वभाव सामान्य है और वर्तमान अंश विशेष है, पर्याय है। इन दोनों को मिलाकर जो सम्पूर्ण द्रव्य है, वह प्रमाण का विषय है और उसमें से सामान्य स्वभाव द्रव्यार्थिकनय का विषय है तथा विशेष पर्यायार्थिकनय का विषय है। द्रव्यार्थिक नय की दृष्टि में पर्याय गौण है अर्थात् इस नय की दृष्टि में सिद्धदशा प्रगट हुई ह्न यह बात नहीं आती; त्रिकालशुद्ध ज्ञानस्वभाव ही द्रव्यदृष्टि का विषय है और उसके ही आश्रय से निर्मल पर्याय प्रगट होती है। द्रव्य का विश्वास करने से ही पर्याय में निर्मल कार्य होता है ह्न ऐसा स्वभाव है।

प्रश्न: द्रव्यनय और द्रव्यार्थिकनय के विषय में क्या अन्तर है?

उत्तर: द्रव्यनय का विषय तो एक ही धर्म है। समयसारादि में द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक ह्न ऐसे दो ही मुख्यनय लिए हैं; उनमें जो द्रव्यार्थिकनय है, उसका विषय अभेद द्रव्य है। द्रव्यनय तो वस्तु में भेद करके उसके एक धर्म को लक्ष्य में लेता है; जबकि द्रव्यार्थिकनय भेद किये बिना वर्तमान पर्याय को गौण करके अभेद द्रव्य को लक्ष्य में लेता है ह्न इसप्रकार इन दोनों के विषय में बहुत अन्तर है। समयसार में कथित शुद्धनिश्चयनय का जो विषय है, वह द्रव्यनय का विषय नहीं है; उस निश्चय/द्रव्यार्थिक नय का विषय तो वर्तमान अंश को तथा भेद को गौण करके सम्पूर्ण अनन्तगुणों का पिण्ड है; जबकि द्रव्यनय तो अनन्त धर्मों में से एक को भेद करके विषय करता है।

समाचार दर्शन –

पण्डित रतनचन्द भारिल्ल का सार्वजनिक अभिनन्दन

एवं अभिनन्दन ग्रन्थ 'रतनदीप' का लोकार्पण

जयपुर (राज.) : श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के प्राचार्य, विशिष्ट मनीषा के धनी, अध्यात्मरत्नाकर पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल का सार्वजनिक अभिनन्दन समारोह रविवार, दिनांक 16 जनवरी, 05 को सायंकाल सी-स्कीम स्थित श्री महावीर दि. जैन उच्च माध्यमिक विद्यालय, जयपुर में आयोजित किया गया।

समारोह की अध्यक्षता जयपुर के महापौर श्री अशोक परनामी ने की। मुख्य अतिथि राजस्थान उच्च न्यायालय के न्यायाधिपति श्री नरेन्द्रकुमार जैन थे। विशिष्ट अतिथि के रूप में शिक्षा राज्यमंत्री-राजस्थान सरकार श्री वासुदेव देवनानी, महासमिति के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री अशोक बड़जात्या, पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के निर्देशक डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल, पूर्व सांसद श्री डालचन्द जैन सागर, वरिष्ठ पत्रकार श्री मिलापचन्द डंडिया, श्री अखिल बंसल आदि मंचासीन थे।

मूड़बिद्री के भट्टारक पण्डिताचार्य स्वस्ति श्री चारूकीर्तिजी का मंगल संदेश लेकर दिल्ली से पधारे डॉ. जयकुमार उपाध्ये ने सभा को उनका आशीर्वचन पढ़कर सुनाया।

मंचासीन अतिथियों के अतिरिक्त डॉ. विद्यानन्द जैन विदिशा, प्रसिद्ध शिक्षाविद् 96 वर्षीय श्री तेजकरण डंडिया जयपुर, ब्र. जतीशचन्द शास्त्री सनावद, ब्र. अभिनन्दनकुमार शास्त्री खनियांधाना एवं प्राचार्य (डॉ.) शीतलचन्द जैन ने भी सभा को संबोधित किया।

श्री प्रेमचन्द बजाज द्वारा तिलक, श्री अभिनन्दनप्रसाद सहारनपुर, श्री आदीश जैन दिल्ली द्वारा माल्यार्पण, श्री प्रदीपकुमार चौधरी किशनगढ़ द्वारा रजत श्रीफल एवं श्री महीपाल जैन बांसवाड़ा द्वारा शॉल भेंटकर पण्डितजी का सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया; तत्पश्चात् अशोक बड़जात्या ने माननीय एन.के. जैन से अभिनन्दन ग्रन्थ **रतनदीप** का लोकार्पण कराया। एवं उसकी प्रथम प्रति पण्डित रतनचन्दजी को भेंट की। इसीप्रसंग पर पण्डितजी की धर्मपत्नी श्रीमती कमलाजी भारिल्ल का अभिनन्दन श्रीमती परनामी एवं श्रीमती सुशीला डंडिया ने किया।

महाविद्यालय के प्राचार्यत्व की रजत जयन्ती के अवसर पर महाविद्यालय के छात्रों ने भी रजत प्रशस्ति-पत्र भेंटकर कृतज्ञता ज्ञापित की।

श्री दिग. जैन महासमिति, श्री कुन्दकुन्द कहान दिग. जैन तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट मुम्बई, राजस्थान जैन सभा, कुन्दकुन्द परमागम ट्रस्ट सोनागिरि, भारतवर्षीय दि. जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी राजस्थान अंचल, अखिल भारतीय तारण-तरण शोध संस्थान, जैन संस्कृति रक्षा मंच, श्री दि. जैन डॉक्टर्स फोरम, तीर्थधाम मंगलायतन अलीगढ़, आत्मार्थी ट्रस्ट दिल्ली, सिद्धायतन द्रोणगिरि आदि लगभग 70 राष्ट्रीय, प्रादेशिक, स्थानीय संस्थाओं तथा देश के विभिन्न नगरों एवं मण्डलों से पधारे गणमान्य प्रतिनिधियों द्वारा पण्डितजी का माल्यार्पण एवं शाल आदि भेंटकर स्वागत किया गया।

प्रात:काल श्री टोडरमल स्मारक भवन में **मेरी दृष्टि में बड़े दादा** विषय पर आयोजित विचार गोष्ठी की अध्यक्षता जैन प्रचारक के सम्पादक डॉ. सुरेशचन्दजी जैन दिल्ली ने की। विशिष्ट अतिथि

श्री महेन्द्रकुमारजी पाटनी एवं मुख्य अतिथि श्री महीपाल जैन बांसवाड़ा थे। गोष्ठी में वर्तमान एवं भूतपूर्व स्नातकों में पण्डित अभिषेक जैन सिलवानी, पण्डित सौरभकुमार जैन फिरोजाबाद, डॉ. अनेकान्त जैन दिल्ली, डॉ. महावीरप्रसाद जैन उदयपुर, डॉ. मुकेश शास्त्री विदिशा, पण्डित राकेश शास्त्री अलीगढ़, पण्डित राजकुमार शास्त्री बांसवाड़ा, पण्डित प्रदीपकुमार झांझरी उज्जैन के अतिरिक्त श्री अनेकान्त भारिल्ल, श्री परमात्मप्रकाश भारिल्ल, डॉ. उत्तमचन्द भारिल्ल एवं डॉ. सत्यप्रकाश जैन दिल्ली ने भी अपने हृदयोद्‌गार व्यक्त किये। संचालन पण्डित शांतिकुमारजी पाटील ने किया।

दोपहर के सत्र में **बीसवीं सदी की विद्वत् परम्परा में श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय का योगदान** विषय पर आयोजित विद्वत् गोष्ठी की अध्यक्षता डॉ. उदयचन्दजी उदयपुर ने की। विशिष्ट अतिथि श्री भागचन्द कोठारी थे।

इस अवसर पर डॉ. सत्यप्रकाश शास्त्री दिल्ली, डॉ. पी.सी. जैन, श्री बुद्धिप्रकाशजी भास्कर, डॉ. प्रेमचन्दजी रांवका, डॉ. मानमलजी, डॉ. सुरेशचन्दजी, डॉ. उदयचन्द जैन, डॉ. बी.एल. सेठी, पण्डित शांतिकुमार पाटील एवं डॉ. श्रीयांसकुमार सिंघई आदि ने अपने विचार व्यक्त किये। संचालन श्री अखिल बंसल ने किया। **– अशोक बड़जात्या,** अध्यक्ष, अभिनन्दन समारोह समिति

डॉ. भारिल्ल साधना चैनल पर : दर्शकों के विचार

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के साधना चैनल पर प्रसारित हो रहे प्रवचनों का लाभ प्रतिदिन प्रात: हजारों लोग ले रहे हैं, इस सम्बन्ध में अनेकों पत्र हमारे पास प्राप्त हो रहे हैं।

जोरावर नगर (गुज.) मुमुक्षु मण्डल के प्रमुख श्री ललितभाई सेठ लिखते हैं कि ह्न

''साधना चैनल पर रोज प्रात: ६.४५ बजे पण्डित हुकमचन्दजी भारिल्ल का प्रवचन सुनते हैं तो दिल प्रसन्न हो जाता है। प्रत्येक विषय की नवीनतम व्याख्या सुनने को मिलती है। वे जिस भी विषय पर चर्चा करते हैं तथा उसके स्पष्टीकरण के लिये जो रेफ्रेंस देते हैं, वो इतना परफैक्ट होता है कि विषय के अनुरूप होकर उसकी पूर्ति बन जाता है। सचमुच यह अद्‌भुत बात है, इसके लिये प्रखरबुद्धि और जबरदस्त अभ्यास चाहिये तभी यह मुमकिन है। लगता है पण्डित हुकमचन्दजी के दिलो-दिमाग पर सरस्वती विराजमान है, उनका कोई अद्‌भुत ही क्षयोपशम है।

मैं इतना ही कहूँगा कि जैसे परमाणु के दो भाग नहीं हो सकते ठीक वैसे ही पण्डितजी द्वारा कहे गये या लिखे गये विषयों में कोई बात शेष बच ही नहीं सकती। हम सबका परम सौभाग्य है कि हमारे बीच ऐसी जबरदस्त प्रतिभा है जो निरन्तर समाज को अद्‌भुत विषय प्रदान कर रही है। इसके लिये उनको बहुत-बहुत धन्यवाद !

डॉ. भारिल्ल तो इस युग का अचम्भा है। जयपुर ट्रस्ट (पं. टोडरमल स्मारक ट्रस्ट) उनकी बराबर सेवायें ले रहा है, यह बहुत अच्छी बात है। वहाँ से पण्डितजी के प्रवचनों की सी.डी., वी.सी.डी., पुस्तकें लगातार प्रकाशित हो रही है, जो भावी पीढी के लिये अत्यन्त उपयोगी बन जायेगी, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

पण्डित टोडरमलजी ने जो ज्योत जलाई थी, उसको पूज्य गुरुदेवश्री ने समझाया तथा पण्डित हुकमचन्दजी ने इतना दैदिप्यमान किया है कि दसों दिशा अत्यन्त प्रकाशमान हो चुकी है।

ऐसी प्रतिभा के लिये बारंबार साधुवाद !''

विद्वत् सम्मेलन एवं संगोष्ठी सम्पन्न

भिण्ड (म.प्र.) : यहाँ दिनांक २९ दिसम्बर से ३१ दिसम्बर, २००४ तक श्री महावीर परमागम मंदिर ट्रस्ट द्वारा त्रि-दिवसीय विद्वत् सम्मेलन एवं गोष्ठी का आयोजन किया गया।

इस विद्वत् सम्मेलन में समाज के अनेक मूर्धन्य विद्वान एवं विशिष्ट प्रतिनिधि सम्मिलित हुये। गोष्ठी में ब्र.सुमतप्रकाशजी खनियांधाना, डॉ. अरविन्दजी करहल, पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी आगरा, डॉ. वीरसागरजी दिल्ली, पण्डित राकेशकुमारजी अलीगढ़, डॉ. योगेशचन्दजी अलीगंज, पण्डित कमलेशकुमारजी मौ एवं पण्डित सुनीलकुमारजी शिवपुरी आदि अनेक विद्वानों के प्रवचनों का लाभ समाज को प्राप्त हुआ।

गोष्ठी का मुख्य विषय **'विद्वानों द्वारा समाज में तत्त्व की निर्दोष प्रभावना कैसे हो ?'** तथा **'वर्तमान में बाल शिक्षण-शिविरों की भाँति प्रौढ शिविरों की भी महती आवश्यकता है'** रखा गया। इन विषयों पर विद्वानों ने अपने विचार प्रस्तुत किये।

इस सम्पूर्ण आयोजन की व्यवस्था तथा संचालन में स्थानीय मुमुक्षु समाज एवं अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन शाखा भिण्ड का विशेष सहयोग प्राप्त हुआ। सम्पूर्ण कार्यक्रम का सफल संचालन पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी आगरावालों ने किया। सम्मेलन में बाल ब्र. रवीन्द्रजी का भी पावन सान्निध्य एवं मंगलमय मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। **ह्न महेन्द्रकुमार शास्त्री**

पंचम वार्षिकोत्सव एवं शिविर सम्पन्न

इन्दौर (म.प्र.) : यहाँ साधनानगर स्थित श्री दिगम्बर जैन पंचबालयति एवं विहरमान बीस तीर्थंकर जिनालय की स्थापना के पंचम वार्षिकोत्सव पर दिनांक २१ से २६ जनवरी, २००५ तक श्री १७० तीर्थंकर मण्डल विधान एवं आध्यात्मिक शिविर सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, जयपुर के प्रवचनों का लाभ श्रोताओं को मिला तथा श्रीमती कमलाजी भारिल्ल एवं पण्डित मनीषजी शास्त्री रहली के भी प्रवचन हुये।

विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य पण्डित मनीषजी शास्त्री ने सम्पन्न कराये। इस अवसर पर पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट को साहित्य की कीमत कम करने हेतु ५००० रुपये प्राप्त हुये। सभी कार्यक्रम पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा के निर्देशन में सम्पन्न हुये। **– मनोहरलाल काला**

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

08 से 12 मई 05	भायंदर-मुम्बई	पंचकल्याणक प्रतिष्ठा
13 से 30 मई 05	कोल्हापुर	प्रशिक्षण-शिविर
02 जून से 25 जुलाई	विदेश*	धर्म प्रचारार्थ
31 जुलाई से 9 अगस्त	जयपुर	शिक्षण-शिविर

* विदेश कार्यक्रम आगामी अंक में विस्तार से प्रकाशित किया जायेगा।

आत्मार्थी छात्रों को अपूर्व अवसर

आत्मार्थी छात्र डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के सान्निध्य में रहकर चारों अनुयोगों के माध्यम से जैनधर्म का सैद्धान्तिक अध्ययन कर सकें तथा साथ ही संस्कृत, न्याय, व्याकरण आदि विषयों का आवश्यक ज्ञान प्राप्त करे ह्न इस महत्त्वपूर्ण उद्देश्य से जयपुर में विभिन्न ट्रस्टों के सहयोग से श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय चल रहा हैं, जिसमें लगभग 171 छात्र अध्ययन कर रहे हैं।

अबतक 360 छात्र शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण करके शासकीय एवं अर्द्धशासकीय सेवाओं में रहकर विभिन्न स्थानों में तत्त्वप्रचार की गतिविधियाँ संचालित कर रहे हैं, जिनमें से 52 छात्र जैनदर्शनाचार्य की स्नातकोत्तर परीक्षा उत्तीर्ण कर चुके हैं।

ज्ञातव्य है कि यहाँ प्रवेश पानेवाले छात्रों को राजस्थान विश्वविद्यालय की जैनदर्शन (तीन वर्षीय शास्त्री स्नातक) कोर्स की परीक्षायें दिलाई जाती हैं, जो बी.ए. के समकक्ष हैं तथा सरकार द्वारा आई. ए. एस. जैसी किसी भी सर्वमान्य प्रतियोगिता परीक्षा में सम्मिलित होने के लिये मान्यता प्राप्त हैं।

शास्त्री परीक्षा में प्रवेश के पूर्व छात्र को योग्यतानुसार दो वर्ष का राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, अजमेर का उपाध्याय परीक्षा का पाठ्यक्रम पढ़ाया जाता है जो हायर सैकेण्ड्री (12वीं) के समकक्ष है। इसप्रकार कुल 5 वर्ष का पाठ्यक्रम है। इसके बाद दो वर्ष का जैनदर्शनाचार्य का कोर्स भी है, जो एम.ए. के समकक्ष है।

उपाध्याय में प्रवेश हेतु किसी भी प्रदेश के माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की सेकेण्डरी (दसवीं) परीक्षा विज्ञान, गणित, सामाजिक विज्ञान व अंग्रेजी सहित उत्तीर्ण होना आवश्यक है।

यहाँ डॉ.हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री, बाल ब्र. यशपालजी जैन, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील एवं पण्डित संजीवकुमारजी गोधा के सान्निध्य में छात्रों को निरंतर आध्यात्मिक वातावरण प्राप्त होता है।

सभी छात्रों को आवास एवं भोजन की सुविधा नि:शुल्क रहती है।

आगामी सत्र 25 जून 2005 से प्रारंभ होगा। स्थान अत्यंत सीमित है, अत: प्रवेशार्थी शीघ्र ही निम्नांकित पते से प्रवेशफार्म मंगाकर अपना प्रार्थना-पत्र अंक सूची सहित जयपुर प्रेषित करें। यदि प्रवेश योग्य समझा गया तो उन्हें कोल्हापुर, महाराष्ट्र में 13 मई से 30 मई, 2005 तक होनेवाले ग्रीष्मकालीन प्रशिक्षण शिविर में साक्षात्कार हेतु बुलाया जायेगा, जिसमें उन्हें प्रारंभ से अन्त तक (18 दिन) रहना अनिवार्य होगा।

यदि दसवीं का परीक्षाफल अभी उपलब्ध न हुआ हो तो पूर्व परीक्षाओं की अंक सूची की सत्यप्रतिलिपि के साथ प्रार्थनापत्र भेज सकते हैं। दसवीं का परीक्षा परिणाम प्राप्त होते ही तुरंत भेज दें।

कोल्हापुर का पता –
श्री मनोहर अथणे
अनंतकीर्ति, दर्शन हॉस्पिटल के सामने,
साहूपुरी, पहली गल्ली, कोल्हापुर (महा.)
फोन - (0231) 2653781

पण्डित रतनचन्द भारिल्ल
श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धा. महाविद्यालय,
श्री टोडरमल स्मारक भवन,
ए-4, बापूनगर, जयपुर 302015 (राज.)
फोन - (0141) 2705581, 2707458